International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 28-01-2023, Accepted: 11-02-2023, Published: 01-03-2023
Volume 9, Issue 2, 2023, Page No. 1-3

मुक्तिबोध का प्रगतिवादी दृष्टिकोण

सावित्री सूर्यकांत मांढरे
प्रा. सौ, एम्. ए.एम्. पी.एड, औद्योगिक शिक्षण मंडल पुणे, महाराष्ट्र, भारत

सारांश
मार्क्सवादी दर्शन पर आस्था रखनेवाले और जनक्रांति का स्वप्न देखनेवाले मुक्तिबोध की प्रगतिवाद के बारे में धारणा क्या थी? यह जानना इस शोध पत्र का प्रमुख प्रयोजन हैं। कुछ लोग उन्हें अस्तित्ववादी मानते हैं, तो कुछ लोग उन्हें प्रगतिवादी मानते हैं, तो कुछ लोग प्रयोग वादी मानते है, इसीलिए इस कवी के साहित्यिक भूमिका को स्पष्ट करना तथा उनके प्रगतिवादी दृष्टिकोण के बारे में विस्तार से जानना यही इस शोधकार्य का उद्देश्य हैं। मुक्तिबोध के काव्य में प्रयोगवाद और प्रगतिवाद का रासायनिक मिश्रण हैं। वे एक साथ ही प्रयोगवादी भी हैं और प्रगतिवादी भी। उनकी प्रगतिवादी भूमिका किस तरह की रही हैं' इसी उद्देश्य से इस शोधपत्र का लेखन किय हैं। उन्होंने प्रयोगवाद के प्रणेता 'अज्ञेय' जी द्वारा संपादित तारसप्तक में अपना काव्य लेखन किया फिर भी वे एक प्रगतिवादी कवी कहलाते है। वे अन्य प्रगतिवादियों की तरह नहीं हैं। यह शोधपत्र इसलिए महत्वपूर्ण हैं क्यों की यह उन्हें अन्य प्रगतिवादियों से अलग करता हैं तथा अधिक जानकारी प्राप्त कराता हैं।

मूल शब्दः प्रगतिवादी दृष्टिकोण, मार्क्सवादी दर्शन, आस्था

प्रस्तावना
हिंदी साहित्य के अंतर्गत गजानन माधव मुक्तिबोध की विशेष छाप दिखाई पड़ती हैं। इनका जन्म १९१७ में मध्य प्रदेश के शिव पूरी में हुआ था। अज्ञेय द्वारा संपादित तारसप्तक में उनकी प्रमुख भूमिका रह चुकीं हैं। उनका 'चाँद का मुँह टेढ़ा हैं' यह पहला कविता संग्रह विशेष चर्चित हैं। यह उनके मृत्यु के बाद १९६४ में प्रकाशित हुआ।, इसमें २८ कविताये संकलित हैं। इसमें तीन लंबी कविताये ब्रह्म राक्षस, दिमागी गुहाँधकार का ओरांग उटांग 'तथा' अँधेरे मेंश शामिल हैं। उनका दूसरा कविता संग्रह 'भूरी भूरी खाक धूलि', इसमें ४७ कविताये संमिलित हैं। भूरी भूरी खाक धूल की भूमिका में स्वयं अशोक वाजपेयी जी ने लिखा हैं की" एक समय कविता में निराला जी की जो केन्द्रीयता रही वही अब मुक्तिबोध की है। अपनी सारी दुरुहता एवं उबड़ खाबड़ पन के बावजूद मुक्तिबोध आज की कविता की उग्रता सामाजिक चेतना, सृजनात्मक साहस और वैचारिक प्रतिश्रुति के उद्गम कवी हैं।''
'कामायनी एक पुनर्विचार' इस समीक्षा ग्रंथ के माध्यम से गजानन माधव मुक्तिबोध ने एक नविन दृष्टी दी हैं। इनका काव्य चिंतन प्रधान हैं इन्होने सामाजिक रूढ़ियों, अपूर्ण व्यक्तित्व, अन्याय एवं शोषण का सदैव विद्रोह किया। मध्यम वर्गीय जीवन का विकास, उच्च वर्गीय समाज द्वारा किये जानेवाले शारीरिक, बौद्धिक, मानसिक शोषण को जीवन की सबसे बड़ी विडंबना बताया और इसे तोड़ने के प्रयास में जीवन में दुःख व् स्वतः दुःख से व्यथित थे। समाज में व्याप्त अत्याचार, भ्रष्टाचार अन्याय के लिए पूंजीवादी व्यवस्था को उत्तरदायी मानते हैं। सत्य एवं यथार्थ की दृष्टी ने उन्हें मार्क्सवादी चेतना प्रदान की।
मुक्तिबोध के काव्य में प्रयोगवाद और प्रगतिवाद का रासायनिक मिश्रण हैं। वे एक साथ ही प्रयोगवादी भी हैं और प्रगतिवादी भी। किन्तु दोनों की अतिरेकवादी प्रवृत्तियाँ उन्हें मान्य नहीं।

प्रगतिवाद स्वरुप एवं संकल्पना
जो कवी आदिकाल में वीरगाथाएँ लिखता नजर आता हैं, वही मध्यकाल में भक्तिकाव्य, लक्षणग्रंथ, तथा सौंदर्य चित्रण करता हैं। आधुनिकाल तक आते आते काव्य के साथ साथ गद्य रचनाये भी होने लगी। आधुनिक काल में भारतेन्दु युग में पौराणिक कथाओं के आधारपर संगीत नाटक लिखे गए तो द्विवेदी युग में विचार प्रधान निबंध लिखे गए। अलग अलग विषय होते थे लेकिन वैयक्तिकता उसमे नहीं होती थी। सामाजिक प्रबोधन जैसे विषय तथा पौराणिक, ऐतिहासिक विषय हुआ करते थे, छायावाद की धारा के अंतर्गत कवियों ने प्रकृति चित्रण किया। उसके बाद में जो काव्य की धारा आयी उसमे कवी की वैयक्तिक भावनाये व्यक्त होने लगी, शोषितो की पीड़ा का वर्णन होने लगा, उसी धारा को प्रगति वादी धारा कहा गय। हिंदी साहित्य के आधुनिक काल के विभिन्न धाराओं में प्रगतिवाद की धारा ने हिंदी साहित्य की प्रवृत्तियों में विशेष बदलाव लाया। इस काल से कवियों की सोच में भी विशेष परिवर्तन हुआ।
भौतिक जीवन से उदासीन, आत्म निर्भर, सूक्ष्म, अन्तर्मुखी प्रवृत्ति के विरुद्ध प्रतिक्रिया के रूप में, लोकविरुद्ध जगत की तार्किक प्रतिक्रिया हैं प्रगतिवाद। प्रगतिवाद का मूल प्रेरणा स्त्रोत कार्ल–मार्क्स का द्वंद्वात्मक भौतिक वाद हैं। सामाजिक चेतना और भावबोध काव्य का लक्ष्य हैं प्रगतिवाद काव्य में समाजवादी विचारधारा का साम्यवादी स्तर महत्वपूर्ण हैं। प्रगतिवाद समाज को शोषक और शोषित के रूप में देखता हैं। शोषक वर्ग के खिलाफ शोषित वर्ग में चेतना लाने तथा उसे संगठित कर, शोषण मुक्त समाज की स्थापना की कोशिश का समर्थन करता हैं। यह पूंजीवाद सामंतवाद धार्मिक संस्थाओं को शोषक के रूप में चिन्हित कर उन्हें उखाड़ फेकने की बात करता हैं।
राजनितिक क्षेत्र में जो समाजवाद हैं, साहित्य के क्षेत्र में वही प्रगतिवाद हैं। प्रगतिवाद शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग १९४२ में मुक्तिबोध ने अपने एक लेख श्प्रगतिवादः एक दृष्टी आगामी कल' में किया था। प्रगतिशील साहित्य का नारा। कला संसार को बदलने के लिए था। शिवदान सिंह चौहान ने लिखा हैं की, हमारा साहित्यिक नारा कला कला के लिए नहीं वरन कला संसार को बदलने के लिए हैं। इस नारे को बुलंद करना प्रगतिशील साहित्य का फर्ज हैं।

मुक्तिबोध का प्रगतिवाद

हिंदी साहित्य में मुक्तिबोध बहुमुखी प्रतिभासंपन्न साहित्य के प्रति समर्पित एवं प्रतिबद्ध रचनाकार हैं। अमानवीय स्थितियों में षड्यंत्र के शिकार हो रहे मनुष्य एवं मानवीय स्थितियाँ मुक्तिबोध के साहित्य में केन्द्र मे है।

मुक्तिबोध ने जब साहित्य के क्षेत्र में प्रवेश किया तब छायावाद का अंतिम दौर चल रहा था और प्रगतिवाद और प्रयोगवाद के उत्थान का समय था। सन १६३६ में प्रगतिशील लेखकसंघ की स्थापना के साथ साहित्य में प्रगतिशीलता की लहर उठने लग। आरंभ से मुक्तिबोध में व्यवस्थित जीवन दर्शन अपनाने की प्यास थी। इस दौर में वे इमर्सन, बर्गसॉ जैसे भाववादी दर्शनिक के प्रभाव में पड़ गए। इसी काल में वे प्रगतिशील लेखकसंघ के सक्रीय सदस्य भी बने। मार्क्सवादी दर्शन के प्रभाव में पड़ने पर अधिक वैज्ञानिक, अधिक मूर्त और अधिक तेजस्वी दृष्टिकोण उन्हें प्राप्त हुआ। इसी दौर तारसप्तक का प्रकाशन हुआ। जिसमे मुक्तिबोध की कविताओं को स्थान मिला। इस बहाने वे हिंदी साहित्य जगत में एक क्षमता संपन्न कवी के रूप में चिरप्रतिष्ठित हुए।

प्रगतिवादी आंदोलन और मुक्तिबोध का लेखन काल एक ही हैं। प्रगतिवाद का आधारभूत दर्शन मार्क्स वाद हैं। मुक्तिबोध एक सचेत विचारक होने के साथ साथ अपने सामाजिक उत्तरदायित्व को बहुत गहरे महसूस भी करते हैं। वे समाज का पर्यवेक्षण करते हैं, वे कहते हैं की," समाज के विकट दृश्य देख रहे हैं शोषण और उत्पीड़न पहले से बहुत अधिक बढ़ गया हैं नोच खचोट, अवसरवाद, भ्रष्टाचार का बाजार, वर्ग हैं काल के मसीहा आग उत्पीड़क हो उठे हैं। अध्यात्मवादी विचार जनता से दूर जा बैठे हैं। ऐसी सामाजिक स्थिति का स्वाभाविक प्रतिफल यह है, की गरीब वर्ग अधिक अधिक गरीब होता जा रहा हैं और धनि वर्ग अधिक अधिक श्रीमां। " ऐसा वर्णन ही उन्हें मार्क्सवादी बनाता हैं।

मुक्तिबोध की आकांक्षा ऐसे समाज की हैं, जो वर्गहीन हैं। अतः वे समाज विश्वासों के चलते पूंजीवादी पाखंडों की पोल भी खोलते हैं। प्रगति शील वैचारिकता की अगतिकता का प्रश्न डॉ. राम विलास शर्मा ने उठाया हैं, वो कहते हैं, की यदि प्रगति वाद एकांगियों तो उसे सर्वांगीण बनाया जा सकता हैं। उसने केवल राजनितिक पक्ष उठाया हैं, यह बात सही नहीं हैं। और सही मान भी ली जाय तो मुक्तिबोध को प्रगतिवादकी उसी परंपरा से जोड़ना उचित होता।

मुक्तिबोध सामाजिक प्रतिबद्ध कवी हैं। वे साहित्य और समाज में तथा सौंदर्य प्रतीति और सामाजिक दृष्टी में भी फर्क नहीं देखते। उनका मानना हैं की कोई भी लेखक साहित्य का सृजन आत्म प्रकटीकरण के लिए नहीं करता। और न ही जनता की सेवा करने के लिए। दरअसल वे उस दृष्टिकोण को ही दिमागी फितरत समझते हैं, जिससे सौंदर्य प्रतीति और सामाजिक दृष्टी में ही द्वैत समझा जाता है। वे कहते है की– 'कवी, उपन्यास कार, कहानी लेखक की सौंदर्य प्रतीति ही असंभव हैं, वे व्यक्ति और समाज में फर्क नहीं देखते। 'वे कहते हैं की,' हमारी आत्मा में जो कुछ है वह समाज प्रदत्त हैं– हमारा सामाजिक व्यक्तित्व हमारी आत्मा हैं। आत्मा का सार तत्व प्रकृत रूप से सामाजिक हैं। व्यक्ति और समाज का विरोध बौद्धिक विक्षेप हैं। इस विरोध का कोई अस्तित्व नहीं। जहा व्यक्ति समाज का विरोध करता दीखता हैं, वहाँ वस्तुतः समाज के भीतर की ही एक सामाजिक प्रवृत्ति दूसरी सामाजिक प्रवृत्ति से टकराती हैं। वह समाज का अंतर्विरोध हैं, न की व्यक्ति के विरुद्ध समाज का या समाज के विरुद्ध व्यक्ति कां।

मुक्तिबोध के प्रगतिवादी दृष्टिकोण को आजमाने के लिए हमें निम्नलिखित मुद्दों की तरफ ध्यान देना होगा,

1. जनता के पक्षधर

जनता में जनभावना में, उसकी मुक्ति में, मुक्ति के लिए किये जाने वाले प्रयत्नों में उनकी गहरी आत्मा हैं तारसप्तक में संग्रहित कविताये सन ४२ के उत्तरार्ध के पूर्व की ही कविताये हैं ऐसी परिस्थिति में तारसप्तक की कुछ कविताओं में मार्क्सवाद का प्रभाव होना स्वाभाविक हैं इन कविताओं में पूंजीवाद के विरुद्ध क्षोभ के बावजूद व्यक्तिचेतना का ही प्राधान्य हैं श्सृजन क्षणश कविता में वे जनता के पक्षधर बनकर उनके बारे में कहते हैं

'जब की स्वयं मैं सुज्ञ बना हु
अज्ञो का अंतर पाकर ही
सदा रहु उनका चाकर ही
वे की उन्होंने आत्मा रक्त से मुझको सींचा
कैसे हॅस सकता मैं उनपर ही
उन्होंने जनता को ही अपने विकास का स्त्रोत माना

2. समाज से जुड़े रहने की लालसा

समाज से जुड़े रहने उनकी लालसा उनकी कविता' 'मैं उनका ही होता' कविता में स्पष्ट होती हैं

मैं दुनिया काही होता, जिनसे मैंने रुपभाव पाए हैं
वे मेरे ही हिये बंधे हैं जो मर्यादाये लाये हैं
मेरे शब्दभाव उनके हैं
मेरे पैर और पथ मेरा
मेरा अंत और पथ मेरा
ऐसे किन्तु चाव उनके हैं

इसप्रकार कवी जनता के द्वारा विकास प्राप्त करना चाहता हैं

पूंजीवादी व्यवस्था का विरोध

मार्क्सवाद से प्रेरित होने के पश्चात् जनसाधारण को शोषण से लगी समसामयिक पूंजीवादी व्यवस्था का विरोध मुक्तिबोध करते हैं उन्होंने अपनी कविताओं के द्वारा पूंजीवादी व्यवस्था से समाज को मुक्त करने की राह ढूंढी हैं शोषण पर आधारित पूंजीवादी व्यवस्था ही उनकी बेचौनी का मुख्या कारण हैं श्पूंजीवादी समाज के प्रति श शीर्षक कविता में पूंजीपतियों से क्षुब्ध होकर वे कहते हैं

"छोडो हाय, केवल घृणा औ दुर्गन्ध
तेरी रेशमी वह शब्द –संस्कृति अंध"

मामूली आदमी अपनी व्यथाओं को मौन रूप से सहन करता हैं लेकिन इस खतरनाक व्यवस्था का भीतरी रूप घृणा और दुर्गन्ध से भरी हुई अंध संस्कृति हैं अपनी आक्रोश को जनता की आक्रोश में मिलाकार उसकी उष्णता से पूंजीपतियों की अविवेक को धोने का स्वप्न देखते हैं

'मेरी ज्वाल, जान की ज्वाल होकर एक
अपनी उष्णता से धो ले अविवेक'

सामाजिक यथार्थ की प्रमुखता

सामाजिक यथार्थ मुक्तिबोध के काव्य की प्रमुखता रही हैं एक आत्मा वक्तव्य शीर्षक कविता में व्यवसायीकरण, व्यापारीकरण से उत्पन्न वैषम्य चित्रण है जो व्यक्ति के भीतरी जगत को भयावह बनाता हैं कवी अपनी संवेदना से सामाजिक यथार्थ को उजागर करते हैं

"मारकाट करती हुई सदियों की चीख य
मुठभेड़ करते हुए स्वार्थों के बीच
भोले भोले लोगों के माथों पर घाव"

गुप्त संगठन के बीच क्रांति
कवी की दार्शनिक दृष्टी दुनिया के वैषम्य का मानचित्र देखती हैं सत्ता–मोहि धनलिप्सा शक्ति के कुतंग को देखती हैं इनसबके आगे एक और दृश्य भी कवी देखता हैं जो जनसाधारण के गुप्त संगठन के बीच क्रांति की आग सुलगाता हैं उस आग के प्रकाश में संवेदित ज्ञान का भाव सच्चा होता हैं

असंख्य इत्यादि–जनों का मैं भाग
इसलिए, अन दिखे
सुलगाता धीरे से आग
जिसके प्रकाश में चेहरों पर आप
संवेदित ज्ञान की कांपती ही
उठती हैं भाफ चुपचाप

मुक्तिबोध की सोच में ऐसी व्यवस्था का नाश तुरंत होना अनिवार्य हैं क्यों की अतीत के कई दर्शनों ने इस व्यवस्था का धीरे धीरे अंत करने का निश्चय किया था लेकिन वे असफल हो गए इसलिए पूंजीवाद की विरुद्ध क्रांति का स्वर देने वाले यह रचनाकार पूंजीवाद सत्ता के तिलस्म को जल्द ही जड़ से उखड फेकना चाहते हैं
मुक्तिबोध को कुछ लोग मार्क्सवादी मानते हैं, तो कुछ लोग अस्तित्व वादी मानते हैं। डॉ. रामविलास शर्मा के अनुसार मुक्तिबोध पर अस्तित्व का प्रभाव हैं। डॉ. शर्मा के अनुसार मुक्तिबोध सिजोफ्रेनिक है और उनका व्यक्तित्व विभाजित हैं। वे कभी स्वप्न में जीते हैं तो कभी यथार्थ में, वे नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल आदि की तरह प्रगतिवादी कवी नहीं हैं, प्रगतिवाद की जैसी सरल और भास्वर रेखाए इन कवियों की कविताओं में दिखती हैं वैसी रेखाए मुक्तोबोध के यहाँ नहीं हैं वे अंततः नई कविता के कवी विचारक हैं वे उस तारसप्तक के कवी हैं जो 'अज्ञेय' जैसे प्रगतिवाद विरोधी करार दिए गए कवी के संपादन में निकलां। वे श्रीकांत वर्मा, अशोक वाजपेयी जैसे युवतर कवियों के सघन संपर्क में थें। ये कवी कभी प्रगतिवादी साहित्यिक धारा के प्रभाव में नहीं रहे लेकिन मुक्तिबोध हमेशा उनके लिए महत्वपूर्ण बने रहें।
मुक्तिबोध की प्रगतिवाद से संबंधित जो टिपण्णियाँ और साहित्य चिंतन से संबंधित जो निबंध हैं उन्हें देखने से स्पष्ट होता हैं की की वे अपने अध्ययन अनुभव को अधिक महत्व देते हैं। दूसरों के उदाहरणों के सहारे अपनी प्रगतिवादी समझकी दुनिया वे नहीं निर्मित करतें। इसलिए उनके उदाहरणों में लाल पताका, लाल सुबह, लाल सितारा आदि प्रगतिवादी समर्थक प्रतिक नहीं मिलतें। मुक्तिबोध मानते हैं की प्रगतिवाद साहित्यकला की अत्याधुनिक धारणा इसलिए हैं क्यों की अब तक की कला साहित्य में सामाजिक तत्व का आभाव हैं।
इस सामाजिक तत्व के आभाव के कारन विश्व का विकास ठीक से नहीं हो सका प्वे लिखते हैं, की मानवता के सब उच्च संस्कृति की और किये गए प्रयत्नों में का मुख्य दोष सामाजिक तत्वों की अपेक्षा कृत उपेक्षा रही हैं, जिसके कारन कला उतनी नहीं बढ़ सकी जितनी की बढ़नी चाहिए। विचार उतने ऊँचे और व्यापक नहीं हो सके जितने की होने चाहिए।
प्रगतिवाद उस मुख्य कारन को छीन लेता हैं, और कहता हैं की जब तक सामाजिक न्याय नहीं होगा तब तक व्यक्ति के चिंतन में हमेशा दोष उत्पन्न होते होंगे।

उपसंहार
मुक्तिबोध प्रगतिवाद के समर्थक हैं लेकिन प्रगतिशीलता की यांत्रिक समझ के विरुद्ध भी हैं जनता में जनभावना में उसकी मुक्ति में मुक्ति के लिए किये जानेवाले प्रयत्नों में उनकी गहरी आस्था हैं वे प्रगतिवादी कवियों, आलोचकों की जो समझ बीसवीं सदी के चौथे पाँचवे दशक में थी, उससे वे प्रायः असहमत हैं मार्क्सवादी होने के बावजूद वे प्रगतिशील कवी कहलाने आकांक्षा नहीं रखते वे अपने आपको प्रगतिशील कवी नहीं आधुनिकतावादी कवी मानते हैं।
मुक्तिबोध कि गयी टिपण्णियों से स्पष्ट हैं की वे पुरानी साहित्यिक रूढ़ियों और चेतना के विरुद्ध हैं, वे नए साहित्य और समाज के निर्माण का स्वप्न देखते हैं वे यथार्थ को जटिल तथा बहुस्तरीय मानते हैं और प्रगतिशीलता को एक रेखीय और सरलीकृत अवधारणा मानने के खिलाफ हैं

संदर्भ सूची

1. तारसप्तक: अज्ञेय पृष्ठ १७
2. मुक्तिबोध रचनावली पाँच–मुक्तिबोध पृष्ठ ३१२
3. तारसप्तक: अज्ञेय पृष्ठ २७
4. तारसप्तक: अज्ञेय पृष्ठ ३५
5. मुक्तिबोध रचनावली: पाँच–मुक्तिबोध
6. चाँद का मुंह टेढ़ा है–मुक्तिबोध
7. प्रगतिवाद: एक दृष्टि–निबंध मुक्तिबोध रचनावली खंड पाँच–पृष्ठ २६